बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 30

क्षमता की कीमत!

निवेश की मांग में लगातार कमी ने आर्थिक वृद्धि पर बुरा असर डाला है। क्या कुछ हद तक इसका जवाब विफलता के बजाय सफलता से मिल सकता है? मिसाल के तौर पर भारी ट्रकों की मांग हाल के महीनों में 22 फीसदी गिरी है। इसकी मुख्य वजह गत जुलाई में घोषित नए नियम हो सकते हैं जिनके तहत ट्रकों को अतिरिक्त भार वहन करने की सुविधा दी गई। ऐसा शायद इसलिए किया गया क्योंकि राजमार्गों की गुणवत्ता में सुधार हुआ है। वही ट्रक अब अधिक माल ढो सकते हैं इसलिए नए ट्रकों की मांग में कमी आई है। इस बीच विनिर्माता अपने वाहनों को नए एक्सल लोड के स्तर के मुताबिक परिवर्तित करने में लगे हुए हैं।

इसी तरह डीजल जनरेटर (डीजी) सेट की बात करें तो उनकी तादाद आज एक दशक पहले की तुलना में कम हो चुकी है। इनकी मांग 2010-11 से 2015-16 के बीच 40 फीसदी गिर गई थी लेकिन उसके बाद इसमें थोड़ा सुधार हुआ। इसकी मुख्य वजह यह है कि दूरसंचार टावरों की संख्या में परिपूर्णता आ गई। नए टावर नहीं लगने के कारण इन टावरों में विद्युत आपूर्ति के लिए प्रयोग किए जाने वाले डीजी सेट की मांग 70 फीसदी तक गिर गई। उसके बाद मांग बढ़ी क्योंकि कुछ अन्य क्षेत्रों में इसकी जरूरत थी। परंतु देश के अधिकांश हिस्सों में बिजली की कमी न होने के कारण 90 फीसदी मामलों में डीजी सेट का इस्तेमाल वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में हो रहा है। अगर बिजली की आपूर्ति भविष्य में और बेहतर हुई तो डीजी सेट की मांग में और अधिक कमी आएगी।

देश में बिजली उत्पादन की क्षमता में पर्याप्त से अधिक सुधार से भी इसे समझा जा सकता है। नवीकरणीय ऊर्जा के अलावा पारंपरिक माध्यम से विद्युत उत्पादन क्षमता में कोई इजाफा नहीं हो रहा है। आंकड़े चौंकाने वाले हैं: वर्ष 2017-18 में 17.8 गीगावॉट की नई बिजली उत्पादन क्षमता तैयार हुई। दो वर्ष बाद यह बढ़कर 23.9 गीगावॉट हो गई। चालू वर्ष के शुरुआती 11 महीनों में यह 2.3 गीगावॉट है, सालाना 11 फीसदी तक गिर जाती है तो यह हर 6.3 वर्ष में दोगुनी होती है। इसके अलावा बुरी खबर को छिपाने का पुराना तरीका भी हर स्तर पर कमजोर पड़ चुका है। डीएफएस, आरबीआई, बॉन्ड बाजार और कॉर्पोरेट बोर्ड हर जगह ऐसा हुआ है। इन दोनों कारकों ने डेट बाजार के व्यवहार में अहम बदलाव उत्पन्न किया। ऋण की प्रक्रिया को और अधिक विश्लेषणपरक बनाना होगा।

सार्वजनिक वित्त पर प्रभाव: बजट प्रक्रिया को आगे ले जाने वाला प्रमुख कारक भविष्य की नॉमिनल वृद्धि दर को लेकर जताया गया अनुमान है। पारंपरिक तौर पर 6 फीसदी वृद्धि और 8 फीसदी की उच्च मुद्रास्फीति के साथ 14 फीसदी नॉमिनल वृद्धि हासिल होती थी। परंतु अब हमें अधिक सतर्क रहना होगा क्योंकि 6 फीसदी और 4 फीसदी की ब्याज दर के साथ 10 फीसदी की नॉमिनल वृद्धि दर हासिल होती है।

रुपये के अवमूल्यन पर प्रभाव: जब देश की मुद्रास्फीति 8 फीसदी और दुनिया की 2 फीसदी थी, तब रुपये पर हर वर्ष 4 फीसदी अवमूल्यन का निरंतर दबाव था। अब मुद्रास्फीति के 4 फीसदी के लक्ष्य के साथ यह दबाव समाप्त हो चुका है।

विनिमय दर में अवश्य अस्थिरता आएगी। जब उभरते बाजार विनिमय दर को संचालित करते हैं तो 12 फीसदी तक अस्थिरता आती है। जब हम पूरी तरह आधुनिक मौद्रिक नीति क्षमता हासिल कर लेंगे तब यह अस्थिरता भी अधिक होगी। परंतु रुपये में गिरावट का कोई व्यवस्थित रुझान नहीं होगा।

प्रतिफल की दर पर प्रभाव: देश में प्रतिफल की दरों का अनुमान बहुत अधिक रहता है। हम सन 1979 से 1990 तक के बीएसई सेंसेक्स और सन 1990 के बाद के निफ्टी के प्रदर्शन पर गौर करने का रुख रखते हैं। इससे प्रतिफल को लेकर बहुत सकारात्मक भावना तैयार होती है। इन अनुमानों को बदलना होगा क्योंकि मुद्रास्फीति में 4 फीसदी तक की कमी आई है और देश में आर्थिक उदारीकरण के वक्त सूचकांकों में एकबारगी तेजी आई थी।

अगर आप यह मानते रहे हैं कि लंबी अवधि में निफ्टी का प्रतिफल औसतन 16 फीसदी रहेगा। कम मुद्रास्फीति में इस अनुमान को घटाकर 12 फीसदी करना होगा। 4 फीसदी मुद्रास्फीति के अनुमान के साथ अल्पावधि की जोखिम रहित दर औसतन 6 फीसदी रह सकती है। शेयर प्रीमियम 5 से 6 फीसदी हो सकता है। कॉर्पोरेट वित्त, निजी इक्विटी फंड के ढांचे आदि पर इसका असर होता है। अगर हम वित्तीय अनुमानों को नए सिरे से आंकें तो कारोबार खड़ा करने की प्रक्रिया की बुनियाद बेहतर होगी।

जब मुद्रास्फीति कुछ समय के लिए कम होती है तो अर्थव्यवस्था पुराने अनुमानों से ही संचालित होती है। शायद कंपनियों का निवेश हाल के वर्षों में सामान्य से कम रहा हो क्योंकि व्यवहार्य परियोजनाएं ही नजर नहीं आ रही थीं। प्रतिफल की दरों के समायोजन के बाद शायद हमें निवेश के क्षेत्र में कहीं अधिक सामान्य हालात नजर आएं।

ऋण पर प्रभाव: मुद्रास्फीति की कम दर ऋण के बारे में हमारी सोच में भी बदलाव लाती है। उच्च असमायोजित (नॉमिनल) वृद्धि में एक तरीका पुराने ऋण को समाप्त करने का भी होता है। हमारे देश में हम हर वर्ष बैलेंस शीट में 15 फीसदी की वृद्धि के अनुमान के आदी हो चले हैं। इसमें 4.6 वर्ष में दोगुनी वृद्धि होती है। यानी ऐसा ऋण जो आज परेशानी भरा नजर आता है, 4.6 वर्ष में उससे जुड़ी चिंता आधी हो जाती है। दोनों पक्षों को केवल शुरुआती 4.6 वर्ष के लिए जूझना होता है।

यह बैंकों और बैंकिंग नियमन को लेकर काफी महत्त्वपूर्ण था। बैंक फंसे हुए कर्ज को इकठ्ठा करने और उन्हें बढ़ते देने के आदी थे। उदाहरण के लिए बैंकों द्वारा कर्ज दिए जाने वाले हर 100 रुपये में से 20 रुपये फंस जाते थे। अंकेक्षण और नियामकीय उपायों का इस्तेमाल करके बुरी खबर को टाला जाता है ताकि फंसे हुए कर्ज का सामना 4.6 वर्ष बाद किया जा सके। इस मोड़ पर 20 में से 5 रुपये की वसूली होती और 15 रुपये का नुकसान हो जाता। कुल 200 में 15 के नुकसान को बचाव के काबिल ठहराया जा सकता है।

बैलेंस शीट में तेज वृद्धि का पुराना माहौल बदल चुका है। कम मुद्रास्फीति वाले माहौल में जब बैलेंस शीट वृद्धि यानी पुरानी क्षमता का बमुश्किल 10 फीसदी। वास्तविक उत्पादन नहीं बढ़ने के बावजूद स्थगित क्षमता के रूप में गुंजाइश है। बिजली क्षेत्र के अन्य हिस्सों में भी बिजली पारेषण और ट्रांसफॉर्मर क्षमता पहले अपने उच्चतम स्तर पर पहुंची और उसके बाद इसमें गिरावट आई। हालांकि यह सब उतने नाटकीय अंदाज में नहीं हुआ जितना कि उत्पादन क्षमता में।

साप्ताहिक मंथन

टी. एन. नाइनन

रेलवे जैसे कई अन्य क्षेत्र भी हैं जहां ऐसे रुझान साफ नजर आ रहे हैं। नई रेल क्षमताओं में और सुविधाओं का विस्तार करने में बहुत बड़ी मात्रा में निवेश किया गया है लेकिन इसके बावजूद माल और यात्री वहन के मामले में रेलवे ने कोई खास वृद्धि नहीं दर्ज की है। ऐसे में शुद्ध रूप से प्रति किलोमीटर प्रति टन माल ढुलाई बीते पांच साल में बमुश्किल 3.6 फीसदी की दर से बढ़ी है। जबकि 2016-17 तक के तीन वर्षों में प्रति किलोमीटर यात्रियों की तादाद में वृद्धि बमुश्किल एक प्रतिशत रही। राजस्व के मोर्चे पर प्रदर्शन जरूर बेहतर रहा क्योंकि शुल्क दरों में इजाफा किया गया है, लेकिन उसके लिए बहुत बड़े निवेश की जरूरत नहीं है। संभव है कि दो रैपिड फ्रेट कॉरिडोर का काम पूरा होने के बाद ट्रैफिक में इजाफा हो और मौजूदा मार्गों पर गति में इजाफा होगा। उस वक्त रेलवे में भी पहले निवेश में इजाफा होगा और फिर मंदी आएगी। यह लगभग उस वक्त होगा जब ट्रैफिक में इजाफा होगा।

अंतिम उदाहरण दूरसंचार क्षेत्र का है जहां रिलायंस एवं अन्य कंपनियों ने हाल के वर्षों में बुनियादी ढांचे में जबरदस्त निवेश किया। रिलायंस के अलावा सभी दूरसंचार कंपनियां भारी कर्ज में डूबी हैं और वे पहले की तरह निवेश नहीं कर सकतीं। रिलायंस द्वारा शुल्क दरों में भारी कमी किए जाने के कारण मोबाइल फोन के डेटा ट्रैफिक में भारी इजाफा हुआ है लेकिन दरें इतनी कम हैं कि यह भी निश्चित नहीं है कि राष्ट्रीय लेखा में इसका आकलन कैसे होगा।

सार यह है कि प्रमुख बुनियादी क्षेत्रों में, बेहतर क्षमताओं और कम पहुंच वाले बाजारों में संपूर्णता की स्थिति ने पूंजीगत निवेश में उसी पैमाने पर कमी हुई जैसी कि पहले। इसका कुछ प्रभाव तो आर्थिक मंदी के रूप में दर्ज किया जाएगा। उबर और ओला भी कारों की मांग में कमी के लिए आंशिक जिम्मेदार हो सकती हैं। विमानन क्षेत्र में अगर दो विमानों के उड़ान भरने और उतरने के बीच के अंतर को आधा कर दिया जाए तो हवाई पट्टी की क्षमता दोगुनी हो सकती है। ये सारे उदाहरण उत्पादकता में सुधार के हैं जिन्हें सकल घरेलू उत्पाद का आकलन करते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए। परंतु क्या वाकई ऐसा होगा?

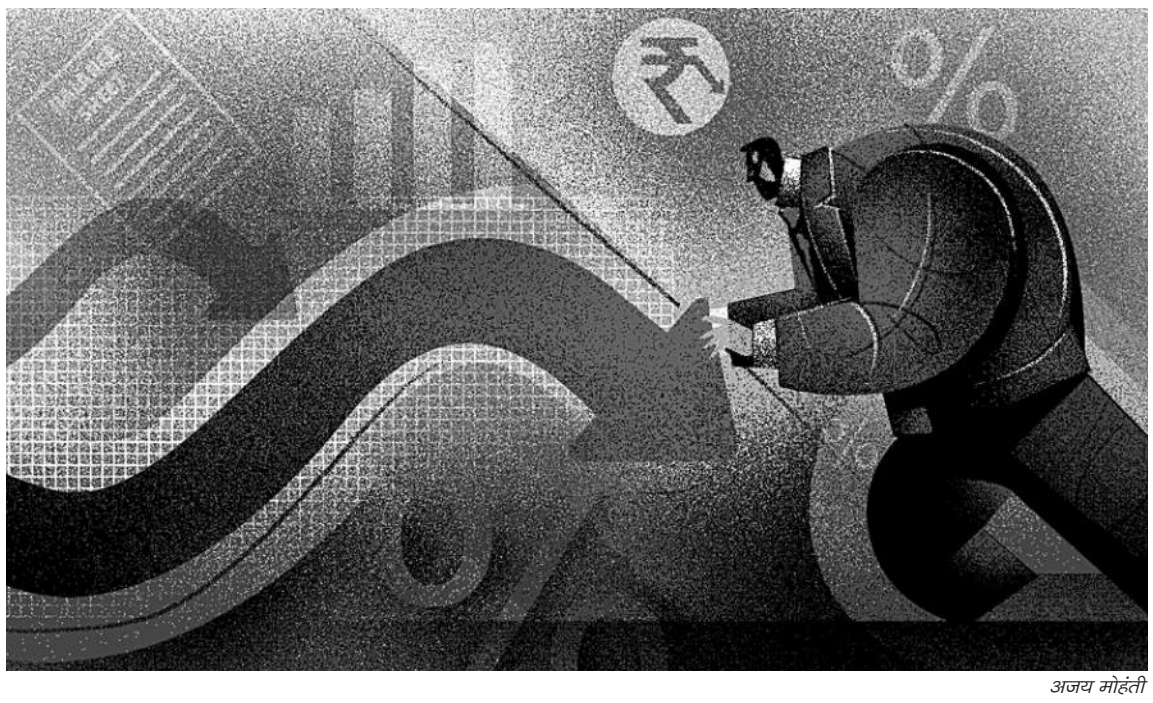

अजय मोहंती

मुद्रास्फीति के नए अनुमान से बेहतर होगी बुनियाद

अगर हम कम मुद्रास्फीति के नए माहौल को आधार मानकर विश्लेषण करेंगे तो कारोबारी जगत को अपनी बुनियाद बेहतर करने का अवसर मिलेगा। विस्तार से बता रहे हैं **अजय शाह**

वर्ष 2015 के बाद से भारतीय रिजर्व बैंक सालाना आधार पर 4 फीसदी की खुदरा महंगाई दर को लेकर प्रतिबद्ध है। मुद्रास्फीति को लक्षित करने से संबंधित तमाम तर्क इस बात पर जोर देते हैं कि कितनी कम और अनुमान लायक मुद्रास्फीति दर वृहद अर्थव्यवस्था को स्थिर रखने का काम कर सकती है। मुद्रास्फीति की 4 फीसदी की स्थिर दर का अनुमान भविष्य को लेकर हमारी योजनाओं में कई तरह के बदलाव लाता है। इस आलेख में हम वेतन भत्तों में वृद्धि, उधारी, सार्वजनिक वित्त, रुपये के अवमूल्यन, कॉर्पोरेट निवेश और फंड प्रबंधन आदि को लेकर चर्चा करेंगे।

कम मुद्रास्फीति का नया दौर: मुद्रास्फीति का लंबा संकट फरवरी 2006 में शुरू हुआ। नीतिगत समुदाय का मानना था कि मौद्रिक नीति में संस्थागत सुधार की आवश्यकता है। इसके बाद ही 20 फरवरी, 2016 को मॉनिटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क एग्रीमेंट (एमपीएफए) पर हस्ताक्षर किए गए। आरबीआई मुद्रास्फीति के पारदर्शी और एकल 4 फीसदी के लक्ष्य को पूरा करने के लिए स्वयं में बदलाव ला रहा है।

फिलहाल ऐसा लग रहा है कि आरबीआई 20 फरवरी, 2020 तक मुद्रास्फीति की दर को 4 फीसदी तक रखने में कामयाब रहेगी। इस प्रकार वृहद आर्थिक स्थिरता का पूरा पांच वर्ष का कार्यकाल पूरा होगा। एमपीएफए के गठन के पहले भविष्य की मुद्रास्फीति के लिए 8 फीसदी की दर मान्य थी। अब हम 4 फीसदी की स्थिर मुद्रास्फीति दर की बात कर रहे हैं। इस बात का निजी और सार्वजनिक नीतियों की निर्णय प्रक्रिया के तमाम क्षेत्रों पर गहरा प्रभाव पड़ेगा।

वेतन भत्तों की वृद्धि पर असर: वेतन-भत्तों में इजाफे को लेकर बुनियादी कायदा ही बदल जाता है। पहले वेतन वृद्धि 10 फीसदी के इर्दगिर्द होती थी। यही आधारभूत कायदा था। यह 2 फीसदी वास्तविक वृद्धि थी और कुछ कर्मचारियों को 10 फीसदी से भी अधिक बढ़ोतरी मिलती थी। अब हमें खुद को 5 फीसदी वेतन वृद्धि के लिए तैयार करना होगा। मुद्रास्फीति के हिसाब से 5 फीसदी की वृद्धि होगी और कुछ कर्मचारियों को 5 फीसदी से अधिक वृद्धि हासिल होगी।

जब कुछ समय के लिए मुद्रास्फीति कम होती है तो अर्थव्यवस्था उसे लेकर पुराने अनुमानों के मुताबिक काम करती है। हाल के वर्षों में शायद कंपनियों द्वारा रोजगार देने की गति हाल के कुछ वर्षों की तुलना में कम हुई है क्योंकि उनके राजस्व यानी कुल वृद्धि की तुलना में उनके वेतन भत्ते काफी तेजी से बढ़े हैं। एक बार जब कंपनियां कम वेतन वृद्धि के साथ सामंजस्य स्थापित कर लेंगी तो श्रम बाजार का माहौल कहीं अधिक सहज होगा।

राजनीतिक नहीं बल्कि अफसरशाही पर काबू पाने की सावंत की चुनौती

सियासी हलचल

आदिति फडणीस

गोवा में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) के साथ लंबे समय तक काम कर चुके एक समर्थक राज्य के नए मुख्यमंत्री के बारे में कहते हैं, 'अगर कमरे में 10 लोग मौजूद हैं और उनमें से एक देवेंद्र फडणवीस (महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री) भी हैं तो आप चंद पलों में ही उन्हें पहचान लेंगे। लेकिन प्रमोद सावंत खुद ही अपने विरोधी हैं। वह हमेशा लो-प्रोफाइल रहते हैं और भीड़ में उन्हें तलाश पाना खासा मुश्किल होता है। इसके बावजूद उनमें कुछ स्पष्ट नजर आने वाली खासियत हैं जिनके चलते मनोहर परिकर ने उन्हें पहचाना और भावी चुनौतियों के लिए तैयार किया।'

गोवा के ग्रामीण इलाके बिचोलिम से ताल्लुक रखने वाले सावंत कभी भी मंत्री नहीं रहे और केवल 11 साल पहले ही सक्रिय राजनीति में आए थे। राजनीति में उनका उत्थान काफी जल्दी हुआ। दूसरी बार विधायक बने सावंत को देश का सबसे कम उम्र का विधानसभा अध्यक्ष बनने का भी मौका मिला। गोवा में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के एक वरिष्ठ नेता का मानना है कि परिकर ने सावंत को इसलिए आगे बढ़ाया कि वह उनके भीतर अपनी छवि भी देखते थे। सावंत एक सहज इंसान हैं और उनकी ख्वाहिशें एवं जरूरतें भी काफी सरल हैं। फिश करी और चावल उनका पसंदीदा भोजन है और बिना किसी बहस में उलझे हुए चुपचाप काम करना उनका शगल है। लेकिन गोवा में आरएसएस और भाजपा के साझा परिवार का हरेक सदस्य इस बात पर सहमत है कि सावंत को बहुत बड़ी खाई भरनी है। परिकर के भीतर नेतृत्व का एक बेहतरीन गुण था। उन्हें बखूबी पता था कि उन्हें राज्य की 38 फीसदी ईसाई अल्पसंख्यक आबादी को भी साथ लेकर चलना है। वह ऐसा केवल राजनीतिक कारणों से नहीं बल्कि इसलिए भी करते थे कि ऐसा करना ही सही है। सावंत भी परिकर की तरह संघ की पृष्ठभूमि से ही आते हैं। उन्होंने परिकर के ही कहने पर भाजपा का दामन थामा था लेकिन उन्हें हमेशा इस बात का ध्यान रहा है कि राष्ट्रवाद या गोमांस को मुद्दा नहीं बनाया जा सकता है क्योंकि ऐसा होने पर कांग्रेस दूसरे विरोधियों के साथ मिलकर सरकार को गिरा देगी।

जहां तक सावंत सरकार का सवाल है तो उसके विरोधियों की कमी नहीं है। परिकर के अंतिम संस्कार के कुछ घंटों के भीतर ही सावंत ने रात के 2 बजे मुख्यमंत्री पद की शपथ ले ली। इसकी वजह यह है कि मार्च 2017 में हुए पिछले विधानसभा चुनाव में कांग्रेस 17 सीटों के साथ सबसे बड़ी पार्टी के तौर पर उभरी थी जबकि भाजपा 13 सीटों के साथ दूसरे स्थान पर रही थी। इसके बावजूद भाजपा अपनी सरकार बना पाने में सफल रही तो उसके लिए कांग्रेस की सुस्ती और नितिन गडकरी एवं परिकर की दूसरों को मनाने की खासियत का भी योगदान रहा था। लेकिन भाजपा के दो विधायकों (परिकर और उससे पहले फ्रांसिस डिसूजा) के निधन के बाद विधानसभा का प्रभावी संख्या बल 36 ही रह गया है। इस स्थिति में भी सहयोगी दल अपनी मांगें मनवाने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ने वाले हैं। महाराष्ट्रवादी गोमांतक पार्टी (एमजीपी) के रामकृष्ण सुदीन धवलीकर इनमें सबसे आगे रहने वाले हैं। उन्हें जब अहसास हो गया कि वह अगले मुख्यमंत्री नहीं बनने जा रहे हैं तो उन्होंने परिकर के अंतिम संस्कार में भी शिरकत करना मुनासिब नहीं समझा। गोवा फॉरवर्ड पार्टी (जीएफपी) के संरक्षक विजय सरदेसाई ने भी ऐसी ही बातें कही हैं। लेकिन इन दोनों में से किसी को भी मनचाहा पद नहीं मिला। दरअसल भाजपा अध्यक्ष अमित शाह ने उन्हें साफ शब्दों में यह बता दिया था कि नई सरकार के मुखिया सावंत ही होंगे और अगर यह बात सरदेसाई एवं धवलीकर को मंजूर नहीं है तो वे फिर नए चुनावों का सामना करने को तैयार हो जाएं। कोई चारा न देख दोनों सहयोगी नेता सावंत को मुख्यमंत्री के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार हो गए लेकिन उन्होंने दोनों को उप मुख्यमंत्री बनाने की शर्त रख दी। इस तरह गोवा की मंत्रिपरिषद में 12 लोग होंगे और उनमें से दो उप मुख्यमंत्री ही होंगे।

यह दिलचस्प खेल तो अभी शुरू ही हुआ है। अब सावंत को न केवल अपने सहयोगी मंत्रियों पर नजर रखनी होगी बल्कि उन्हें यह भी सुनिश्चित करना होगा कि गोवा अपनी परंपरागत पहचान पर कोई समझौता किए बगैर ढांचागत एवं औद्योगिक विकास की राह पर आगे बढ़ता रहे। ऐसा होना निहायत ही जरूरी है। वर्ष 2008 में गोवा ने भूमि अधिग्रहण के खिलाफ जनाक्रोश होने के बाद जारी केंद्रीय अधिसूचना को देखते हुए विशेष आर्थिक क्षेत्र (एसईजेड) बनाने के आठ प्रस्तावों को निरस्त कर दिया था। एसईजेड के विरोधियों का कहना था कि रोजगार की तलाश में आने वाले बाहरी लोगों की गोवा में संख्या काफी बढ़ जाएगी। यह मामला अपने आप में बेहद खास था। इतिहास में पहली बार किसी जातीय पहचान के मसले के चलते कोई औद्योगिक नीति पलटी गई थी। लेकिन यह भी सच है कि गोवा को ढांचागत एवं औद्योगीकरण की सख्त जरूरत है। लेकिन सरकार को यह काम गोवा की पहचान को बनाए रखते हुए और अपनी शर्तों पर अंजाम देना होगा।

सावंत विधानसभा के अध्यक्ष रहे हैं और गोवा अधोसंरचना विकास प्राधिकरण के चेयरमैन भी रह चुके हैं। उसके पहले वह आयुर्वेद चिकित्सक के तौर पर भी सेवाएं देते रहे हैं। लेकिन अब उन्हें एक गठबंधन सरकार चलानी है और खनन एवं कैसिनो जैसे अवरोधों को पार करते हुए गोवा के विकास की इबारत लिखनी है। इसके साथ ही सरकार के भीतर और बाहर चुनौती देने वाले लोगों को भी काबू में रखना होगा।

परिकर को करीब से देखने वाले आरएसएस कार्यकर्ताओं का कहना है कि परिकर के बीमार पड़ने के बाद से अफसरशाही ने अपने तरीके से शासन शुरू कर दिया था। वे कहते हैं, 'अफसरशाही ऐसा घोड़ा है जिसकी लगाम अगर ठीक से नहीं थामी जाए तो वह बेलगाम हो सकता है। ऐसे में सावंत के सामने बड़ी चुनौती राजनीतिक न होकर प्रशासनिक है। सवाल है कि क्या वह अफसरशाही पर काबू पाएंगे और गोवावासियों की प्रमुखता को स्थापित कर पाएंगे?'

कानाफूसी

इतना सस्ता

हाल के कुछ वर्षों में चुनावों के दौरान सोशल मीडिया के इस्तेमाल में जमकर इजाफा हुआ है। इस बार अधिकांश लोगों का दांव व्हाट्सऐप पर लगा है। इस बीच व्हाट्सऐप पर ही एक अत्यंत दिलचस्प अभियान देखने को मिल रहा है। इसमें पूछा गया है कि क्या आप अपना वोट 27 पैसे में बेचने जा रहे हैं। इसके पीछे का गणित एकदम साधारण है। एक वर्ष में 365 दिन होते हैं यानी पांच वर्ष में 1,825 दिन। अगर एक वोट 500 रुपये में बिकता है तो प्रतिदिन के हिसाब से यह राशि होगी 500 बटा 1825 (500/1825) यानी 27 पैसा। इस अभियान में यह सलाह दी जा रही है कि आपको वोट के पहले किसी भी तरह की धनराशि स्वीकार करने के पहले इस बारे में सोचना अवश्य चाहिए।

राजनीति और प्रशासन

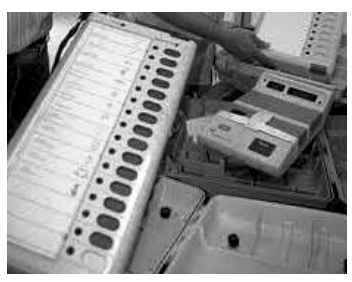

निर्वाचन आयोग की आदर्श आचार संहिता लागू होने के बाद जाहिर है चुनावी सरगर्मी बढ़ी है और इस बीच कुछ विशिष्ट प्रकार की दिक्कतें भी पैदा हो रही हैं। मध्य प्रदेश में कुछ सरकारी अधिकारियों के लिए अलग किस्म की समस्या खड़ी हो गई। दरअसल निर्वाचन आयोग उन शिकायतों को लेकर काफी गंभीर है जो सरकारी अधिकारियों की राजनीतिक संबद्धता से ताल्लुक रखती हैं। पिछले दिनों उमरिया के जिलाधिकारी अमरपाल सिंह और सिंगरौली के पुलिस अधीक्षक हितेश चौधरी का तबादला कर दिया गया क्योंकि उनके परिजन स्थानीय राजनीति में काफी प्रभावशाली भूमिका में हैं। जानकारी के मुताबिक भारतीय जनता पार्टी ने इन दोनों अधिकारियों के खिलाफ लिखित शिकायत दर्ज कराई थी। अमरपाल सिंह जहां पूर्व विधायक प्रमिला सिंह के पति हैं, वहीं चौधरी कालापीपल के कांग्रेस विधायक कुणाल चौधरी के छोटे भाई है।

आपका पक्ष

देश की आधी आबादी और चुनाव

सरकारी आंकड़े के मुताबिक पिछले आम चुनाव में लगभग 26 करोड़ महिलाओं ने मतदान किया था और यह संख्या पुरुषों से महज 3 करोड़ कम थी। सवाल यह है कि क्या वर्ष 2019 के आम चुनाव में महिलाओं का मत निर्णायक साबित हो सकता है। इसका जवाब शायद हां है, तभी तमाम राजनीतिक दलों में महिलाओं को बढ़चढ़ कर स्थान देने की होड़ लगी है। सवाल यह भी है कि महिलाओं का मत उनकी स्वेच्छा से जाता है या उनके परिवार के मत के साथ। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को मतदान के दौरान कहते हुए सुना जाता है कि घरवालों ने उस प्रत्याशी को वोट देने को कहा इसलिए उसे ही वोट दिया गया। उनके परिवार के पुरुषों और उनमें यह अंतर शायद इसलिए होता है क्योंकि उनकी प्राथमिकताएं

अलग हैं। इसलिए महिला मतदाता अपने विवेक का इस्तेमाल करके वोट करें। इस जागरूकता की पहल चुनाव आयोग और राजनीतिक दलों के द्वारा होनी चाहिए। हालांकि सत्ता में आने वाली सभी सरकारों ने महिला सशक्तीकरण के बड़े-बड़े दावे किए हैं पर धरातल पर

लोकसभा चुनाव 11 अप्रैल से 19 मई तक होंगे और मतगणना 23 मई को होगी

महिलाओं की स्थिति पिछले साल आई थॉमसन रॉयटर्स की रिपोर्ट के इर्द गिर्द घूमती है। अंतत: इतने बड़े पैमाने पर महिलाओं का मत किसी भी राजनीतिक दल की किस्मत बना या बिगाड़ सकती है।

संजय दूबे, नई दिल्ली

मृत्यु भोज : सजा व दंड का प्रावधान

समाज में मृत्यु भोज देने की प्रथा सदियों से चली आ रही है। किसी व्यक्ति के निधन के बाद रिश्तेदारों तथा समाज के लोगों को वृहद स्तर पर भोजन कराने की मृत्यु भोज की परंपरा है। साधन संपन्न लोग ऐसे कार्यक्रमों में काफी खर्च करते देखे जाते हैं। इसके तहत समाचार पत्रों के माध्यम से शोक संदेश तथा आमंत्रण संदेश भी प्रसारित किए जाते हैं। सामाजिक दबाव के कारण कई बार व्यक्ति अपनी आर्थिक क्षमता से अधिक कर्ज लेकर खर्च कर देता है। पुरातन काल में व्यक्ति के शोकाकुल परिवार को सांत्वना देने के लिए करीबी रिश्तेदारों को कुछ निर्धारित दिनों तक उनके साथ रहने और सादे तरीके से भोजन करने की प्रणाली विकसित की गई थी। यह आगे चल कर अघोषित नियमों वाली एक प्रथा में तब्दील हो गई। देश में इस प्रथा को खत्म करने के लिए 60 के दशक में राजस्थान मृत्यु भोज प्रतिषेध अधिनियम 1960 मौजूद है। इसके तहत ऐसे भोज कराना तथा भोजन करना अपराध की श्रेणी में आते हैं। मौजूदा कानून में सुधार करते हुए इसका समुचित क्रियान्वयन तय करना होगा। आम लोगों को खुद जागरूक होना होगा जिससे ऐसी गतिविधियों में खर्च हो रही राशि को दूसरे उत्पादक कार्यों में लगाया जा सके।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।